NEW ERA AGRICULTURE MAGAZINE

चने में रोगों का प्रबन्धन करके पायें अधिक उपज

जय कुमार यादव, सुशील कुमार सिंह, विजय कुमार यादव एवं मोनिका सिंह

परिचय

चना भारत में उगाई जाने वाली प्रमुख दलहनी फसलों में एक है। चने को दालों का राजा कहा जाता है। पोषक मान की दृष्टि से चने के 100 ग्राम दाने में औसतन 11 ग्राम पानी, 21.1 ग्राम प्रोटीन, 4.5 ग्रा. वसा, 61.5 ग्रा. कार्बोहाइड्रेट, 149 मिग्रा. कैल्सियम, 7.2 मिग्रा. लोहा, 0.14 मिग्रा. राइबोफ्लेविन तथा 2.3 मिग्रा. नियासिन पाया जाता है। चने का प्रयोग दाल एवं रोटी के लिए किया जाता है। चने को पीसकर बेसन तैयार किया जाता है, जिससे विविध व्यंजन बनाये जाते हैं। चने की हरी पत्तियाँ साग बनाने, हरा तथा सूखा दाना सब्जी व दाल बनाने में प्रयुक्त होता है। दाल से अलग किया हुआ छिलका और भूसा भी पशु चाव से खाते है । दलहनी फसल होने के कारण यह जड़ों में वायुमण्डलीय नत्रजन स्थिर करती है,जिससे खेत त की उर्वरा शक्ति बढ़ती है। भारत में चने की खेती मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान तथा बिहार में की जाती है। देश के कुल चना क्षेत्रफल का लगभग 90 प्रतिशत भाग तथा कुल उत्पादन का लगभग 92 प्रतिशत इन्ही प्रदेशों से प्राप्त होता है। भारत में चने की खेती 7.54 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में की जाती है जिससे 7.62 क्विं./हे. के औसत मान से 5.75 मिलियन टन उपज प्राप्त होती है। भारत में सबसे अधिक चने का क्षेत्रफल एवं उत्पादन वाला राज्य मध्यप्रदेश है तथा छत्तीसगढ़ प्रान्त के मैदानी जिलो में चने की खेती असिंचित अवस्था में की जाती है। चने में लगभग एक ही रोग से लगभग ५०-६० प्रति शत का नुकसान हो जाता है। जिससे रोगों का प्रबंधकन हेतु खेत की तैयारी से लेकर बुवाई तक बहुत ही ध्यान देना चाहिए। चने की खड़ी फसल में रोगों का प्रकोप बहुत ही अधिक होता है खासतौर पर उत्तर प्रदेश कुछ इलाको में उकठा रोग से पूरी की पूरी फसल नस्ट हो जाती है जिससे किसानो का बहुत नुकसान होता है।

मृदा- चने की खेती के लिए दोमट या भारी दोमट, मार एव पडुवा भूमि जहाँ पानी के निकास का उचित प्रबंध हो उपयुक्त होती है सामान्यतौर पर चने की खेती हल्की से भारी भूमियों में की जाती है,किंतु अधिक जल धारण क्षमता एवं उचित जल निकास वाली भूमियाँ सर्वोत्तम रहती है। मृदा का पी-एच मान 6-7.5 उपयुक्त रहता है। चने की खेती के लिए अधिक उपजाऊ भूमियाँ उपयुक्त नहीं होती,क्योंकि उनमें फसल की बढ़वार अधिक हो

जाती है जिससे फूल एवं फलियाँ कम बनती हैं।

जलवायु- चना एक शुष्क एवं ठण्डे जलवायु की फसल है जिसे रबी मौसम में उगाया जाता हे। चने की खेती के लिए मध्यम वर्षा (60-90 से.मी. वार्षिक वर्षा) और सर्दी वाले क्षेत्र सर्वाधिक उपयुक्त है। फसल में फूल आने के बाद वर्षा होना हानिकारक होता है, क्योंकि वर्षा के कारण फूल परागकण एक दूसरे से चिपक जाते जिससे बीज नही बनते है। इसकी खेती के लिए 24-300 सेल्सियस तापमान उपयुक्त माना जाता है। फसल के दाना बनते समय 30 सेल्सियस से कम या 300 सेल्सियस से अधिक तापक्रम हानिकारक रहता है।

भूमि की तैयारी- चने की खेती के लिए भूमि की तैयारी का बहुत ही योगदान होता है अंसिचित अवस्था में मानसून शुरू होने से पूर्व गहरी जुताई करने से रबी के लिए भी नमी संरक्षण होता है। एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल तथा 2 जुताई देशी हल से की जाती है। फिर पाटा चलाकर खेत को समतल कर लिया जाता है। दीमक प्रभावित खेतों में क्लोरपायरीफास मिलाना चाहिए इससे कटुआ कीट पर भी नियंत्रण होता है। चना की खेती के लिए मिट्टी का बारीक होना आवश्यक नहीं है, बल्कि ढेलेदार खेत ही चने की उत्तम फसल के लिए अच्छा समझा जाता है । खरीफ फसल कटने के बाद नमी की पर्याप्त मात्रा होने पर एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा दो जुताइयाँ देशी हल या ट्रेक्टर से की जाती है और फिर पाटा चलाकर खेत समतल कर लिया जाता है। दीमक प्रभावित खेतों में क्लोरपायरीफास १.५ प्रतिशत चूर्ण २० किलो प्रति हेक्टर के हिसाब से जुताई के दौरान मिट्टी में मिलना चाहिए। इससे कटुआ कीट पर भी नियंत्रण होता है।

उन्नतशील प्रजातियाँ- अवरोधी, राधे , गुजरात चना-४, के-८५०, उदय,पन्त जी- १८६,पूसा-२५६, के.डब्लू. आर.-१०८ जे.जी-१६ वैभव जेजी-74, श्वेता, विशाल, जे.जी.के-2, हिमा, उज्जैन 21 आदि प्रमुख उन्नत शील किस्मे हैं

बीज की मात्रा- चने की समय पर बोआई करने के लिए देशी चना (छोटा दाना) ७५-८० कि.ग्रा/हे. तथा देशी चना (मोटा दाना) 80 - १०० कि.ग्रा./हे., काबुली चना (मोटा दाना) - १०० से १२० कि.ग्रा./हे. की दर से बीज का प्रयोग करना चाहिए। पछेती बुवाई हेतु देशी चना (छोटा दाना) - ८०-९० किग्रा./हे. तथा देशी चना (मोटा दाना) - १०० से ११० कि.ग्र./हे. तथा उतेरा पद्धति से बोने के लिए १०० से १२० किग्रा./हे. बीज पर्याप्त रहता है। सामान्य तौर बेहतर उपज के लिए प्रति हेक्टेयर लगभग ३.५ से ४ लाख की पौध सख्या अनुकूल मानी जाती है।

बीजोपचार -

राइजोबियम कल्चर से - अलग- अलग दलहनी फसलो का अलग- अलग राइजोबियम कल्चर होता है। एक पैकेट २०० ग्राम १० किलो ग्राम बीज के उपचार के लिए पर्याप्त होता है। बाल्टी में १० किग्रा. बीज डाल कर अच्छी प्रकार मिला दिया जाता है। ताकि सभी बीजों पर कल्चर लग जाये और इस प्रकार राइजोबियम कल्चर से सने सीड को कुछ देर बाद छाया में सुखा लेना चाहिए ।

पी.एस.बी. कल्चर से - पी.एस.बी. कल्चर का प्रयोग अवश्य करना चाहिए ।

सावधानियां - राइजोबियम कल्चर से उपचारित करने के बाद धुप में नहीं सुखाना चाहिए। और जहाँ तक संभव हो सके तो बीज उपचार दोपहर के बाद करना चाहिए ताकी बीज शहं को ही अथवा दुसरे दिन सुबह बोया जा सके ।

बीज शोधन- बीज जनित रोगों से बचाव के लिए थिरम २ ग्राम या मैन्कोजेब ३ ग्राम या ४ ग्राम ट्राईकोडरमा अथवा थिरम २ ग्राम + कार्बेन्डाजिम १ ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीज को बोने से पूर्व शोधित करना चाहिए । वीज शोधन कल्चर द्वारा उपचारित करने के पूर्व करना चाहिए ।

बुवाई का समय - चने की बुआई समय पर करने से फसल की वृद्धि अच्छी होती है साथ ही कीट एवं बीमारियों से फसल की सुरक्षा होती है, फलस्वरूप उपज अच्छी मिलती है । असिंचित दशा में २० से ३० अक्टूबर तक चने की बुवाई करने से सर्वाधित उपज प्राप्त होती है। असिंचित क्षेत्रों में अगेती बुआई सितम्बर के अन्तिम सप्ताह से अक्टूबर के तृतीय सप्ताह तक करनी चाहिए। सामान्यतौर पर अक्टूबर अंत से नवम्बर का पहला पखवाड़ा बोआई के लिए सर्वोत्तम रहता है। सिंचित क्षेत्रों में पछेती बोआई दिसम्बर के तीसरे सप्ताह तक संपन्न कर लेनी चाहिए। उतेरा पद्धति से बोने हेतु अक्टूबर का दूसरा पखवाड़ा उपयुक्त पाया गया है।

धान कटाई के बाद दिसम्बर के प्रथम सप्ताह तक चने की बोआई की जा सकती है, जिसके लिए जे. जी. ७५ , जे. जी. ३१५, भारती, विजय, अन्नागिरी आदि उपयुक्त किस्में है ।

सिंचाई - जहाँ तक अधिकतर चने की खेती असिंचित अवस्था में की जाती है। चने की फसल के लिए कम जल की आवश्यकता होती है। चने में जल उपलब्धता के आधार पहली सिंचाई फूल आने के पूर्व अर्थात बोने के ४५-६० दिन बाद एवं दूसरी सिंचाई दाना भरने की अवस्था पर अर्थात बोने के ७५ दिन बाद करना चाहिए। और फूल आते समय सिंचाई नहीं करनी चाहिए अक्न्यथा लाभ के बजाय हानि हो सकती है।

खाद एवं उर्वरक : चने की खेती में गोबर की खाद या कम्पोस्ट पाँच टन प्रति हेक्टेयर के हिसाब से खेत की तैयारी के समय देना

चाहिए। चने के लगभग सभी प्रजातियों में २० किलों नत्रजन, ६० किग्रा.फास्फोरस, २० किग्रा. पोटाश, एव २० किग्रा. गंधक (सल्फर) प्रति हेक्टेयर की दर से कुडों में उपयोग करना चाहिए। है। अत: अधिकतम उपज के लिए पोषक तत्वों की पूर्ति खाद एवं उर्वरकों के माध्यम से करना आवष्यक है। उर्वरक की पूरी मात्रा बोवाई के समय कूंड में बीज के नीचे ५-७ से.मी. की गहराई पर देना लाभप्रद रहता है।

कीट नियंत्रण :

कटुआ कीट : चने की फसल को अत्यधिक नुकसान पहुँचाता है। यह लगभग २.५ सेमी. लम्बा तथा ०.७ सेमी चौड़ा मटमैले भूरे रंग का पतंगा होता है इसके अगले पंख पिछले पंखों से रंग में गाढे काले होते हैं जिनके ऊपर लम्बाई में काले रंग के धब्बे होते हैं इस कीट के सुड़ियाँ रात में निकल कर नए पौधे को जमीन की सतह से या पुराने पौधों की शाखावों को काट कर जमीन पर गिरा देती हैं इसकी रोकथाम के लिए २० कि.ग्रा./हे. की दर से क्लोरीपायरीफॉस भूमि में मिलाना चाहिए।

फली छेदक : इसका प्रकोप फली में दाना बनते समय अधिक होता हैं नियंत्रण नही करने पर उपज में ७५ प्रतिशत कमी आ जाती है। इसकी रोकथाम के लिए मोनाक्रोटोफॉस ४० ई.सी १ लीटर दर से ६००-८०० ली. पानी में घोलकर फली आते समय फसल पर छिड़काव करना चाहिए।

चने के रोग एवं नियंत्रण -

उक्ठा रोग:- इस रोग से नये पौधे मुरझाकर गिर जाते हैं । सामान्यतः यह रोग लगभग 30 से 35 दिन की अवस्था में आता है । रोगी पौधे के तने के नीचे वाले भाग को चीरकर देखने से आंतरिक तन्तुओं में हल्का भूरा या काला रंग दिखाई देता है ।

नियंत्रण- चना की फसल अक्टूबर माह के अंत में नवम्बर माह के प्रथम सप्ताह तक कर देना चाहिए । उकठा रोग रोधी प्रजातियां उपयोग करना चाहिए एवं उकठा रोग प्रभावित क्षेत्रो में फसल चक्र अपनाना चाहिए।। ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई करें । प्रभावित पोधा को उखाडकर नष्ट करना अथवा गढ्ढे में दबा देना चाहिये। बीज को कार्बेन्डाजिम २.५ ग्राम या ट्राइकोडर्मा विरडी 4 ग्राम/किलो बीज की दर से उपचारित कर बोना चाहिए।

मूल विगलन रोगः- इस रोग को नियंत्रण करने के लिए गर्मी में गहरी जुताई करें, समय पर बोआई करें, मूल विगलन रोधी प्रजातियों का प्रयोग करना चाहिए जैसे- अवरोधी, पूसा २१२, आदि

एस्कोकाइटा ब्लाईट- एस्कोकाइटा ब्लाईट रोग की रोकथाम के लिए शुरुवात लछन दिखाई देते ही कापर आक्सीक्लोराइड की २.५ ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी की दर से घोल बना कर २-३ छिडकाव १० दिन के अन्तराल पर आवश्यकतानुसार करना चाहिए । एस्कोकाइटा

ब्लाईट रोधी प्रजातियों का प्रयोग करना चाहिए जैसे- गौरव, बी.जी.-२७१ का प्रयोग करना चाहिए ।

कटाई एवं उपज- पौधे की पत्तियां सूख जाये व घेटी का रंग सुनहरा होने पर फसल की कटाई कर मड़ाई कर लेना चाहिए । कटाई में देरी होने से फली गिरने लगती है । वैज्ञानिक विधि अपनाकर असिंचित क्षेत्रों में १२ से १४ क्विंटल प्रति हेक्टेयर एवं सिंचित क्षेत्रों में १८ से २० क्विंटल प्रति हेक्टेयर उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं। काबूली चने की पैदावार देशी चने से तुलना में थोडा सा कम देती है। भण्डारण के समय 10-12 प्रतिशत नमी रहना चाहिए।

जय कुमार यादव, वैज्ञानिक कृषि विज्ञान केंद्र उन्नाव (उ० प्र०)
सुशील कुमार सिंह, विभागाध्यक्ष (पादप रोग विज्ञानं विभाग) आचार्य नरेंद्र देवा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, फैज़ाबाद (उ० प्र०)
विजय कुमार यादव, एन० एन० पी० जी० कालेज गोंडा (उ० प्र०)
मोनिका सिंह, रिसर्च स्कॉलर , (आनुवंशकी एवं पादप प्रजनन विभाग), चंद्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्व विद्यालय कानपुर (उ० प्र०)